बच्चे, नागरिकता और कविता

समीना मिश्रा

जब बच्चे अपनी ज़िन्दगी के अनुभवों को लिखते हैं, तो वे जो महसूस करते हैं, उसे अभिव्यक्त करने के साथ-साथ, अपने बारे में और अपने आसपास की दुनिया के बारे में समझ भी विकसित कर रहे होते हैं। ऐसे में, वे उन विषयों के बारे में सोच पाते हैं जो उनके लिए महत्व रखते हैं। साथ ही, लिखने के लिए विषय चुनने की प्रक्रिया में वे यह भी समझने लगते हैं कि वह विषय उनके लिए क्यों महत्वपूर्ण है। लेख के इस दूसरे भाग में भाईचारे के विचार पर केन्द्रित लेखन की एक गतिविधि का वर्णन किया गया है और बताया गया है कि किस तरह से यह साथ मिलकर रचने की प्रक्रिया में तब्दील हुआ। इसकी बदौलत बच्चे और वयस्क, दोनों ही एक बेहतर समझ विकसित करने की ओर बढ़े।

लेखन का विषय और प्रक्रिया

अँग्रेज़ी के शब्द 'fraternity' का हिन्दी अनुवाद 'बन्धुता' होता है। हालाँकि, यह शब्द आम प्रचलन में नहीं है। यही वजह है कि हमारी चर्चा के लिए मैंने 'अपनापन' शब्द का इस्तेमाल किया। 'अपनापन' से किसी के मन में उन लोगों के प्रति अपनेपन की भावना पनपती है, जिन्हें कोई अपना मानता है। इस प्रकार, मैंने उन्हें लिखने के लिए जो विषय दिया, वह था - मेरे लोग (My People)। एक सुगमकर्ता के तौर पर, मेरी प्रमुख चिन्ता उन्हें अपने शब्दों में लिख पाने में समर्थ बनाने को लेकर थी। इसलिए, इस बात पर ज़ोर देना ज़रूरी हो गया कि वे अपने लेखन में अपनी ज़िन्दगी और अपनी दुनिया के उदाहरणों व घटनाओं को शामिल करें। लोग अन्य लोगों के साथ नज़दीकी से जुड़ी हुई ज़िन्दगी जीते हुए विचारों को अनगिनत तरीकों से अपनाते हैं। बच्चे कई अलग-अलग तरीकों से समुदाय, जाति, अधिकारों और नागरिकता जैसे विचारों से दो-चार होते हैं, लेकिन अपनी ज़िन्दगी के रोज़मर्रा के अनुभव की बदौलत ही वे उन्हें वास्तव में समझ पाते हैं। रोज़मर्रा की ज़िन्दगी साफ-सुथरी और तयशुदा पैटर्न के हिसाब से नहीं होती, यह अलग होती है, और यहाँ तक कि यह भ्रमित करने वाली हो सकती है।

बच्चे अपनी उसी रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में घूमते और खेलते हैं, और एक ऐसे स्थान पर जगहें साझा करते हैं, जहाँ सार्वजनिक और निजी, दोनों

ही जगहें सीमित होती हैं। उन्हीं रोज़मर्रा के अनुभवों से ही वे एक-साथ रहने के, और दूसरों को अपने जैसा व अपने से अलग देखने के तरीके खोजते हैं। इस प्रकार, बच्चों को इस काबिल बनाने के लिए कि वे अपनी बात को अपने शब्दों में अभिव्यक्त कर सकें, मैंने उनके रोज़मर्रा के अनुभवों की ओर रुख किया।

हमारी आपसी बातचीत में, K और S ने उन लोगों के बारे में बात की, जिन्हें वे अपना मानते थे। और जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, उनकी प्रतिक्रियाएँ धर्म, जाति और वर्ग देखकर लोगों से जुड़ने के घिसे-पिटे तौर-तरीकों से अलग थीं। इसकी बजाय, उनके रोज़मर्रा के अनुभवों में उन्हें एक ही समय में अलग-अलग स्थानों पर और अलग-अलग समूहों के साथ अपनापन महसूस हुआ। लेकिन इस गतिविधि के लिए मुझे एक ऐसी रूपरेखा बनाने की ज़रूरत थी जिसे वे इस्तेमाल कर सकें और अपने खुद के उदाहरण शामिल करके उसका विस्तार या विकास कर सकें। इसके लिए मैंने सबसे पहले उनकी ज़िन्दगी के ऐसे सन्दर्भों की पहचान की जिनमें हम अपनेपन के एहसास की खोजबीन कर सकते थे, जैसे कि घर, स्कूल, पड़ोस और देश।

फिर मैंने उनसे ऐसी परिस्थितियों की सूची बनाने को कहा जिनमें उन्हें जुड़ाव महसूस हुआ, जब उन्हें अपनेपन का एहसास हुआ। इसके साथ ही, मैंने उन्हें इनमें से हरेक स्थान के लिए ऐसी परिस्थितियों की एक सूची बनाने को भी कहा, जब उन्हें अपनापन महसूस नहीं हुआ। इससे भाईचारे और जुड़ाव के अमूर्त विचार को वास्तविक भौतिक स्थानों और अपनी ज़िन्दगी के अनुभवों से जोड़ने में मदद मिली। फिर मैंने उन्हें उस सूची में से उदाहरणों को चुनने और दोहराव वाली पंक्ति का इस्तेमाल करके कुछ इस तरह लिखने का सुझाव दिया ताकि कविता की लय बन जाए।

सबसे पहले, मैंने उन्हें 'मेरे लोग' विषय पर एक दोहराव वाली पंक्ति बनाने का सुझाव दिया, जैसे कि 'वो मेरे लोग हैं' (They are my people)। लेकिन ये सुझाव वैसी परिस्थितियों में कारगर नहीं होगा, जिनमें अपनापन ही न हो। इसलिए, जब हमने इस बारे में बात की कि अपनापन वाली स्थितियों और बगैर अपनापन वाली, दोनों सूचियों को कविता का रूप कैसे देना है, तो मैंने सुझाव दिया कि कविता को एक सवालिया तरीके से आगे बढ़ाना शायद एक कारगर तरीका हो सकता है। नतीजन, एक पंक्ति का बार-बार इस्तेमाल हुआ – क्या वो मेरे लोग हैं? (Are those my people?) इस प्रकार, हरेक स्थान की पड़ताल के लिए उन्होंने अपने जीवन की उन विभिन्न परिस्थितियों की

मेरे लोग (K)

वह लोग जो इंडिया में रहते हैं
क्या वह मेरे लोग हैं?
वह लोग जो पाकिस्तान के लिए लड़ते हैं
क्या वह मेरे लोग हैं?

वह बच्चे जो मेरे साथ क्लास में बैठते हैं
क्या वह मेरे लोग हैं?
वह टीचर जो क्लास के बच्चों से गुस्से से बात करते हैं
क्या वह मेरे लोग हैं?

वह फेमिली के लोग जो मेरे साथ रहते हैं
क्या वह मेरे लोग हैं?
वह मामा जो फेमिली से लड़ते हैं
क्या वह मेरे लोग हैं?

वह नानी के गाँव के लोग जो कहते हैं -
"नदी में पानी ज़्यादा है, वहाँ मत जाओ।"
क्या वह मेरे लोग हैं?
वह दुकानवाले जो लड़कियों को गन्दी नज़र से देखते हैं
क्या वह मेरे लोग हैं?

वह लोग जो दुनिया के पर्यावरण को बचाना चाहते हैं
क्या वह मेरे लोग हैं?
वह लोग जो धरम पर लड़ाई करते हैं
क्या वह मेरे लोग हैं?

K द्वारा रची गई कविता।

तुलना की, जिनमें उन्हें अपनापन महसूस हुआ और जिनमें उन्हें अपनापन महसूस नहीं हुआ। इसके बाद वही प्रश्नवाचक पंक्ति दोहराई गई। शैलीगत उपाय के तौर पर प्रथम पुरुष का इस्तेमाल, 'किताब महल' या 'नानी का गाँव' जैसे विशिष्ट नामों का इस्तेमाल और कुछ जगहों पर वक्ता की बातों को ज्यों-का-त्यों इस्तेमाल करने के सुझाव भी मैंने उन्हें दिए। जब चारों छन्द पूरे हो गए, तो कुछ और उदाहरण बाकी बचे थे। हमने परिचयात्मक छन्द जोड़ने की बात की, जो दिए गए सन्दर्भों तक सीमित न होकर, कहीं से भी हो सकता था। इस प्रकार, दोनों लड़कियों की कविता के शुरुआती छन्द भाईचारे के विचार को उजागर करते हैं। K की कविता देशों के विचार के ज़रिए इसे प्रस्तुत करती है

मेरे लोग (S)

वह दोस्त जो मुसीबत में साथ देते हैं
क्या वह मेरे लोग हैं?
वह पड़ोसी जो छोटी-छोटी बात पर लड़ते हैं
क्या वह मेरे लोग हैं?

वह फेमिली के लोग जिन्होंने मेरी बहन की शादी के लिए पैसे दिए थे
क्या वह मेरे लोग हैं?
वह नानी जो मुझ पर शक करती है
क्या वह मेरे लोग हैं?

वह किताब महल लाइब्रेरी के लोग जो मुझे हर चीज़ में चांस देते हैं
क्या वह मेरे लोग हैं?
वह लोग जो ताज होटल के अन्दर जाते हैं
क्या वह मेरे लोग हैं?

वह टीचर जो मेरी बात सुनते हैं और मुझे समझते हैं
क्या वह मेरे लोग हैं?
वह पुलिसवाले जो अमीर का पैसा लेकर गरीब पर इलज़ाम लगाते हैं
क्या वह मेरे लोग हैं?

वह पवई के चाल के लोग जो मेरे साथ 14 अप्रैल को अम्बेडकर जयंती मनाते थे
क्या वह मेरे लोग हैं?
वह लोग जो मस्जिद तोड़ते हैं
क्या वह मेरे लोग हैं?

S द्वारा रचित कविता।

और S की कविता दोस्तों एवं पड़ोसियों के विचार के ज़रिए।

जब मैंने उनसे दो अलग-अलग सूचियाँ बनाने को कहा – एक, जब उन्हें अपनेपन का एहसास हुआ और दूसरी, जब उन्हें अपनेपन का एहसास नहीं हुआ, तो उनके अनुभवों की दो अलग श्रेणियाँ उभरकर सामने आईं। लेकिन सच तो यह है कि अपनापन महसूस होने और न होने के अनुभव इस तरह से श्रेणियों में फिट नहीं होते, ठीक वैसे ही जैसे उनकी पहचान जाति, वर्ग, धर्म और जेंडर वगैरह से घुलमिलकर बनती है। लोगों को परिस्थिति, सन्दर्भ या रिश्तों के आधार पर मज़बूत से लेकर कमज़ोर तक अलग-अलग स्तर का अपनापन महसूस हो सकता है। हालाँकि, इस तरह से एक निर्धारित समय में सूची बनाना, इस गतिविधि

की एक सीमा भी थी। इससे उस प्रक्रिया में मेरी भूमिका भी प्रतिबिम्बित होती है। मैंने उनकी रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में भाईचारे के विचार को समझने के लिए एक रूपरेखा जैसी बना दी थी। इस अभ्यास के इस पहलू को ध्यान में रखना ज़रूरी है (और अपनेपन के विभिन्न रूपों और स्तरों का पता लगाने के लिए बाद में एक अभ्यास किया जा सकता है, जिसमें इस पर ज़्यादा विस्तार से काम किया जा सकता है या साक्षात्कार लिए जा सकते हैं), लेकिन मुझे नहीं लगता कि इससे बच्चों द्वारा लिखे गए विशिष्ट अनुभवों के बारे में उनका आकलन व उनके लेखन की सार्थकता समाप्त हो जाती है। हालाँकि, परिस्थितियों की तुलना दरअसल हरेक छन्द में मौजूद है, दोहराव वाली प्रश्नवाचक पंक्तियों का इस्तेमाल दोनों स्थितियों को सवालों के घेरे में लाता है। ये ऐसे सवाल हैं जिन पर पाठक और लेखक, दोनों को ही विचार करना चाहिए।

अभिव्यक्ति से बदलाव की सम्भावना

इस तरह तैयार हुई ये कविताएँ इन दो किशोरियों की ज़िन्दगी के विविध पहलुओं की कई परतों वाली बहुआयामी तस्वीर पेश करती हैं। दिए गए विषय के जवाब में उन दोनों द्वारा इस्तेमाल किए गए उदाहरण, कामगार वर्ग की रोज़मर्रा की ज़िन्दगी की जटिलता को दर्शाते हैं, जैसे कि परिवारों में मौजूद तनाव, जिससे अपनेपन की जगह के तौर पर परिवार की परम्परागत परिभाषा कमज़ोर पड़ जाती है; दुकानदार जो शायद उन्हीं के मुहल्ले से है, लेकिन जिसकी गंदी नज़रें उसे शिकारी बना देती हैं; ताकत की असमानताएँ जिनकी वजह से गरीब आसानी-से पुलिस की कार्रवाइयों का शिकार बन जाते हैं, जबकि नागरिकों के तौर पर उन्हें पुलिस से सुरक्षा महसूस होनी चाहिए थी। इसके अलावा, शिक्षकों के साथ के और कक्षा के अलग-अलग तरह के अनुभव अपनेपन और अलग-थलग होने का एहसास पैदा कर सकते हैं; दलितों के किसी त्यौहार को मनाने के लिए अलग-अलग लोगों का एकसाथ आना और किसी मस्जिद जानेवाले व्यक्ति के बारे में किसी दलित की यह सोच कि मस्जिद के तोड़ दिए जाने पर वह मस्जिद को खो देगा।

हम पूरे विश्वास से तो ऐसा नहीं कह सकते कि इन तनावों की अभिव्यक्ति से बच्चों का दुनिया से और दूसरों से जुड़ने का ढंग बदल जाएगा, लेकिन अभिव्यक्ति में ऐसे बदलाव की सम्भावना निहित होती है। जब लेखिका (जो कि एक बच्ची है) विभिन्न परिस्थितियों और लोगों के सन्दर्भ में सवाल पूछती है, तो हो सकता है कि उसे जवाब मिल गया हो या हो सकता है कि न भी मिला

हो। मगर फिर भी वह इस सवाल पर विचार कर रही है कि उसके अपने लोग कौन हैं। क्लेमेंटाइन ब्यूवैस इसी 'शक्तिशाली बच्चे' की बात करते हैं, जो अनिश्चित भविष्य को बदलने की सम्भावना रखता है। वे कहते हैं कि इसके पास 'ज़्यादा समय बाकी है' जबकि वयस्क का 'ज़्यादा समय बीत चुका है', उसके पास भविष्य को बदलने की सम्भावना नहीं है।

ब्यूवैस कहते हैं कि बच्चों की किताबें उन्हें कुछ ऐसा सिखा सकती हैं, जो अब तक किसी वयस्क को भी न पता हो। उनके इसी तर्क को आधार बनाते हुए मेरा यह मानना है कि बच्चे अपनी रचनात्मक अभिव्यक्ति से भी ऐसा कुछ सीख सकते हैं, जिससे वयस्क भी अनजान हों। उदाहरण के लिए, भारत में रहनेवाले लोगों की पाकिस्तान के लिए लड़ रहे लोगों से तुलना करते समय, K जबरन थोपे गए अपनेपन पर सवाल उठाती है। वह सवाल उठाती है कि क्या लोगों को यह चुनने की स्वतंत्रता होती है कि कौन, कहाँ रहेगा और किसके लिए लड़ेगा?

यह सवाल केवल पाठकों के तौर पर ही हमारे लिए नहीं है, बल्कि उसके लिए भी है क्योंकि इन सवालों के ज़रिए वह अपने विचारों को व्यवस्थित करने की कोशिश कर रही है। वह पूछती है कि क्या भारत के

सभी लोग सच में उसके अपने हैं, यहाँ तक कि वे भी जो उसे 'छोटी जाति' कहते हैं और अपने बच्चों को उससे बात करने से रोकते हैं। तो ऐसे में क्या ऐसा नहीं हो सकता कि उसे पाकिस्तान के लिए लड़ रहे कुछ लोगों से अपनापन महसूस हो, चाहे भले ही वे सीमा पार एक ऐसे देश में रह रहे हैं जो भारत का कट्टर दुश्मन है? और मान लो, वो लोग उनमें से हों जो पूरी दुनिया के पर्यावरण को बचाना चाहते हों, जैसा कि वह आखिरी छन्द में कहती है।

इसी प्रकार, जब S अपने आखिरी छन्द में पूछती है कि क्या वे सभी लोग जो अम्बेडकर जयन्ती मनाते हैं, मेरे अपने लोग हैं, या फिर वे सभी जो मस्जिदों को तोड़ते हैं, मेरे अपने लोग हैं? तो ऐसा पूछकर वह जातीय और धार्मिक आधार पर बनने वाले समूह की वजह से उभरने वाले अपनेपन के विचार को जटिल बना देती है। S भारत के अन्य हिस्सों में विवादास्पद मस्जिदों से जुड़ी घटनाओं की अभ्यस्त है, भले ही वह मुस्लिम नहीं है और ये मस्जिदें उसके आसपास नहीं हैं। जिस मुस्लिम परिवार के साथ वह पली-बढ़ी है, उससे उसे एक तरह की नज़दीकी महसूस होती है और यह मसला उनके लिए चिन्ता का विषय है। यह इस शक्तिशाली बच्ची की सरल-सी अभिव्यक्ति है, जिससे उसे और वयस्कों, दोनों को यह सीख मिल सकती है कि भाईचारे के क्या मायने हैं।

यह गतिविधि एकसाथ मिलकर कुछ तैयार करने की एक ऐसी प्रक्रिया का उदाहरण है, जिसकी रूपरेखा साफ तौर पर वयस्क द्वारा निर्देशित है। विषय मैंने चुना, अपनेपन की मौजूदगी की पड़ताल करने के लिए स्थानों का चयन मैंने किया, वक्ता के शब्दों को ज्यों-का-त्यों इस्तेमाल करने या नामों का इस्तेमाल करने जैसे औपचारिक विकल्पों के चयन जैसे सुझाव मैंने दिए। मैंने निश्चित तौर पर अधिकार का प्रयोग किया। लेकिन फिर भी, एक किस्म की अनिश्चितता मौजूद थी। मैं सवाल कर सकती थी, सुझाव दे सकती थी, लेकिन वे क्या जवाब देंगे, उनकी रोज़मर्रा की ज़िन्दगी से किस तरह के उदाहरण सामने आएँगे, इसे मैं नियंत्रित नहीं कर सकती थी।

इस प्रकार, हरेक पंक्ति को लिखने का पल असल में वह पल था, जब हमारे फर्क और समानताएँ घुल-मिल गईं। मैं अपने विचारों के ज़रिए अपनी ज़िन्दगी के अनुभवों को उस पल में ले आई और अन्तिम पंक्ति तैयार करने के लिए उन्होंने अपनी ज़िन्दगी के अनुभवों से जोड़ा। यह क्षण सम्भावनाओं एवं विकल्पों से भरा था और बच्चे को ही उनमें से कोई एक विकल्प चुनना था। इस विकल्प को चुनने के बाद, बच्चा खुद के लिए और वयस्क के लिए भविष्य की

सम्भावनाओं का द्वार खोलता है, यानी अपनेपन की पुनर्कल्पना करने का, 'मेरे लोग' को फिर से परिभाषित करने का एक तरीका।

निष्कर्ष

स्पाइरोस स्पाइरो ने बच्चों के साथ शोध में शोधकर्ता के परिप्रेक्ष्य, पृष्ठभूमि और व्यक्तिगत अनुभवों के बारे में लिखा है, ताकि हम शोध के ज़रिए सामने आनेवाली कहानियों में मौजूद 'अव्यवस्था, अस्पष्टता, उनमें कई अलग-अलग नज़रियों की मौजूदगी, गैर-तथ्यात्मकता और उनके अर्थ की कई परतों को स्वीकार कर सकें'। यह लेख उसी अस्पष्ट, कई नज़रियों वाली प्रक्रिया का उदाहरण है, जिसमें कविता के अर्थ की कई परतें या उसकी कई तरह से व्याख्या की जा सकती है। "क्या वो मेरे लोग हैं?" सवाल वयस्क द्वारा पूछा जाता है। इसका बच्चे जो जवाब देते हैं, उसमें उनके अनुभव और परिप्रेक्ष्य घुले-मिले हैं। बच्चों की प्रतिक्रियाओं से यह सवाल मार्मिक व सरल बन जाता है।

निश्चित तौर पर कविताओं के अन्त न सिर्फ पाठक के लिए, बल्कि उन कविताओं को लिखने वाले बच्चों के लिए भी अनिश्चित हैं। लेकिन इसके कई अर्थ निकाले जा सकते हैं। और इसीलिए बच्चों की कही बातों को सुनकर हम समुदाय, सार्वजनिक स्थान और अधिकारों जैसे विचारों को समझने के ज़्यादा सार्थक और कम संकुचित तरीके ढूँढ सकते हैं। जब बच्चे अपने विचारों को इस तरह से अभिव्यक्त करेंगे, तब क्या हम उनकी बात को सुनकर दुनिया को एक नए नज़रिए से देखेंगे?

तो, अपने दोस्त के सवाल (इस लेख के पहले हिस्से से) पर वापस लौटते हैं – मैं आज के इस निराशा भरे दौर का सामना कैसे करती हूँ? मुझे लगता है कि भले ही यह निराशा लगातार हमारे आसपास मौजूद है, लेकिन क्योंकि खुशकिस्मती से मैं बच्चों के साथ बहुत-सा काम करती हूँ इसलिए मेरे सन्दर्भ में रोज़मर्रा के राहत भरे क्षणों में यह निराशा थोड़ी छँट जाती है। बच्चों के साथ बातचीत से न सिर्फ एक हलकापन महसूस होता है, बल्कि वे एक उम्मीद भी जगाते हैं। बच्चे भविष्य को बेहतर करने का बोझ ढोते हैं जो कि ठीक नहीं। यह कुछ ऐसा है, मानो किसी टूटी-फूटी दुनिया की मरम्मत का काम उस ज़िम्मेदारी से पीछा छुड़ा चुके वयस्कों ने बड़ी आसानी-से बच्चों को सौंप दिया हो। लेकिन कहीं-न-कहीं, वे इस ज़िम्मेदारी से बच नहीं सकते क्योंकि भविष्य स्वाभाविक रूप से बच्चों का है और वयस्क उसे बेहतर करने में उनका साथ भर दे सकते हैं।

इस पूरी प्रक्रिया में, यह दायित्व वयस्कों का होना चाहिए कि वे इन्सानों के बीच की अन्तःक्रियाओं में मौजूद सम्भावनाओं को तलाशें। इस

पूरी प्रक्रिया में वयस्क का यह दायित्व है कि पूर्वाग्रह से ग्रसित होने से पहले वे इन्सानों की बातचीत में मौजूद सम्भावनाओं को तलाशें ताकि हम भिन्नताएँ होने के बावजूद एक-दूसरे से जुड़ने के सरल तरीकों को भूल न जाएँ। बच्चों की लेखिका कैथरीन रंडैल लिखती हैं, “बच्चों के लिए लिखने वाले बहुत-से लेखक और चित्रकार पहले से ही उम्मीद को तलाशने और इसे सहेजने का काम कर रहे हैं, अचम्भित करने वाली चीज़ों को रच और साझा कर रहे हैं।” बच्चों के साथ काम करने, उनके साथ कुछ कलात्मक रचने में दुनिया को नए नज़रिए से देखना शामिल है। साथ ही, इस प्रक्रिया में यह याद रखना भी ज़रूरी है कि दुनिया को हमेशा एक नए नज़रिए से देखा और समझा जा सकता है। बच्चों के साथ काम करने पर हम निराशा भरे दौर में भी उम्मीद कायम रख पाते हैं।

समीना मिश्रा: नई दिल्ली स्थित एक वृत्तचित्र फिल्म निर्माता, लेखक और शिक्षक हैं, जिनकी बच्चों से सम्बन्धित मीडिया में विशेष रुचि है। वे भारत में अपने पलने-बढ़ने के अनुभवों को दर्शाने के लिए अपने काम में बचपन, पहचान और शिक्षा के लेंस का इस्तेमाल करती हैं।

यह लेख TESF India द्वारा समर्थित उनके रिसर्च प्रोजेक्ट ‘हम हिन्दुस्तानी’ पर आधारित है।

अँग्रेज़ी से अनुवाद: शहनाज़: वर्तमान में *एकलव्य* की शिक्षा साहित्य टीम के साथ कार्यरत। कुछ सालों तक शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत गैर सरकारी संगठनों के साथ काम करने के बाद, साल 2019 से कॉपी एडिटर और अनुवादक के तौर पर स्वतंत्र रूप से भी काम कर रही हैं। समाज में मौजूद विभिन्न तरह की असमानताओं से जुड़े विविध पहलुओं को समझने में दिलचस्पी रखती हैं। कानपुर में रहती हैं।

सभी फोटो: समीना मिश्रा।

यह लेख *टीचर प्लस* पत्रिका के अंक फरवरी, 2023 से साभार।

सन्दर्भ:

- ब्यूवैट, क्लेमेंटाइन, *दी माइटी चाइल्ड: टाइम एंड पॉवर इन चिल्ड्रन्स लिटरेचर,* जॉन बेंजामिन्स पब्लिशिंग कम्पनी, 2015.
- कम्यूनिटी डिज़ाइन एजेंसी.
  https://communitydesignagency.com/projects/natwar-parekh-colony/
- मणि, लता, *दि इन्टीग्रल नेचर ऑफ थिंग्स: लता मणि इन कन्वर्ज़ेशन विद अम्लानज्योति गोस्वामी,* पब्लिक टेक्स्ट्स a@IIHS, 5 फरवरी 2014
  https://www.youtube.com/watch?v=wKuj2mFx7XQ
- रंडैल, कैथरीन (सं.), *दि बुक ऑफ होप्स: वर्ड्स एंड पिक्चर्स टु कम्फर्ट,* इन्सपाइर एंड एंटरटेन, ब्लूम्सबरी चिल्ड्रन्स बुक्स, 2020
- स्पाइरौ, स्पाइरोस, *दि लिमिट्स ऑफ़ चिल्ड्रन्स वॉइसेस: फ्रॉम ऑथेन्टिसिटी टु क्रिटिकल, रिफ्लेक्सिव रीप्रेज़ेंटेशन, चाइल्डहुड,* 11 अप्रैल 2011
  http://chd.sagepub.com/content/18/2/151